अध्याय-14

हमारे इतिहासकार

के० पी० जयसवाल, ए० एस० अल्तेकर

करीम का सवाल—पटना जिला स्थित मध्य विद्यालय अकबरपुर, के बच्चे पटना में कुम्हरार (मौर्यकालीन अवशेष) घुमने आये हुए थे। कुछ बच्चों की नजर चमकीले लाल—पत्थर के स्तंभ पर गई। एक बच्चे ने अपने शिक्षक से पूछा—सर, क्या यह अशोक का वही स्तंभ है जिसके बारे में हम अध्याय 9 में पढ़ चुके हैं। शिक्षक ने कहा—हाँ, यह खुदाई से निकली है। तपाक से करीम ने पूछा—यह खुदाई किसके द्वारा और क्यों कराई जाती है?शिक्षक ने करीम की जिज्ञासा को शांत करते हुए कहा—इतिहासकार खुदाई में मिले इन्हीं अवशेषों के आधार पर हमारे अतीत (इतिहास) के बारे में जानकारी देते थे। आप अध्याय-14 में बिहार के दो ऐसे ही महान इतिहासकार के बारे में जानेंगे।

काशी प्रसाद जयसवाल (1882–1937)

काशी प्रसाद जयसवाल मिर्जापुर (उत्तर प्रदेश) के निवासी थे। लेकिन इनकी कर्मभूमि पटना थी। ये पेशे से तो अधिवक्ता (वकील) थे लेकिन इनकी ख्याति भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के महान् विद्वान के रूप में ज्यादा हुई। हिन्दू राजतंत्र (प्रचीन भारतीय राजतंत्र) पर इनके विचारों, लेखों एवं पुस्तकों ने इतिहास लेखन में क्रांति ला दी। कई पुराने विचार समाप्त हो गए।

काशी प्रसाद जयसवाल की आर्थिक स्थिति बचपन में अच्छी नहीं थी। इनकी प्रारंभिक शिक्षा इनके घर पर ही लंदन मिशन (आजकल बाबूलाल जायसवाल) हाई स्कूल में हुई। इनके व्यक्तित्व पर भारतीय स्वाधीनता संग्राम का जबरदस्त प्रभाव पड़ा। इनका मन पैतृक व्यवसाय में नहीं लगा तब इन्होंने 25 वर्ष की आयु में इंग्लैंड जाकर पढ़ने की इच्छा व्यक्त

की। इन्होंने ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से इतिहास में एम०ए० की डिग्री हासिल की। अगले वर्ष बैरिस्ट्री भी पास की। लंदन में ही इनका सम्पर्क श्याम जी कृष्ण वर्मा, लाला हरदयाल, सावरकर आदि से हुआ।

1910 ई0 में स्वदेश लौटकर कलकत्ता में इन्होंने वकालत शुरू किया। आगे चलकर कलकत्ता विश्वविद्यालय में इतिहास पढ़ाने लगे। परन्तु क्रांतिकारी विचारों के कारण इन्हें सरकार ने पद त्याग करने के लिए बाध्य कर दिया। फिर 1919 ई० में इनसे पटना विश्वविद्यालय द्वारा भारतीय पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग का 'रीडर' बनने का आग्रह किया गया। अंततः पारिवारिक आवश्यकताओं एवं सरकार की गलत नीतियों के कारण उन्हें विश्वविद्यालय छोड़कर वकालत से ही अपनी जीविका चलानी पड़ी। ये 'हिन्दू कानून के मर्मज्ञ' एवं 'आयकर के विशेषज्ञ' वकील थे। अपनी सारी व्यस्तताओं के बावजूद प्राचीन भारतीय इतिहास पर शोधकार्य करते रहे।

जयसवाल साहब पुरालिपि और प्राचीन मुद्रा के ज्ञाता थे। ये अपनी जेब में 'अनपढ़ा प्राचीन सिक्का' भी रखते थे ताकि फुर्सत के क्षण में इसे पढ़ा जा सके। मनु और याज्ञवल्क्य स्मृति पर कई शोधकार्य करके इन्होंने ' हिन्दू कानून पर मर्मज्ञता हासिल की।

जयसवाल साहब बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी के संस्थापक सदस्य थे। इस संस्था द्वारा प्रकाशित शोध पत्रिका के आजीवन सम्पादक भी रहे। पटना संग्रहालय की स्थापना भी इन्हीं के प्रयासों का परिणाम है। इस संग्रहालय का भवन मुगल–राजपुत कला का सुन्दर उदाहरण है। डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में बिहार इतिहास परिषद् की भी इन्होंने स्थापना की। ये कई समितियों के सदस्य रहे एवं कई पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया। ये काफी निर्भिक और मिलनसार व्यक्ति थे। इनके साथ राहुल सांकृत्यान, रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं रामधारी सिंह दिनकर के काफी नजदीकी संबंध थे। ये कई सम्मेलनों एवं संस्थाओं के सदस्य एवं अध्यक्ष रहे।

1924 में इनकी पुस्तक 'हिन्दू पॉलिटी' प्रकाशित हुई। इस पुस्तक ने भारतीय इतिहास को देखने के नजरिये में क्रांतिकारी परिर्वतन लाया। इन्होंने भारत के गौरवशाली अतीत को

उजागर करते हुए साबित किया कि भारत में प्रजातांत्रिक व्यवस्था उत्तर वैदिक काल से ही थी। इन्होंने अकाट्य तर्क दिया कि प्रचीन भारत में निरंकुश राजतंत्र नहीं था, बल्कि संवैधानिक एवं उत्तरदायी राजतंत्र था। इस पुस्तक के दो भाग हैं। प्रथम भाग में प्रजातंत्र का विवरण है और दूसरे भाग में राजतंत्र का विवरण है।

के० पी० जयसवाल की एक दूसरी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ इंडिया' (150 ई० से 350 ई० तक) 1930 में प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में कुषाण साम्राज्य के अंत और गुप्त साम्राज्य के बीच की अवधि पर प्रकाश डाला गया। इन्होंने साहित्यिक ग्रंथ, अभिलेख एवं सिक्कों के आधार पर गुप्त साम्राज्य के पूर्व नाग एवं वकाटकों के इतिहास पर प्रकाश डाला। 1934 में प्रकाशित 'एन इम्पिरियल हिस्ट्री ऑफ इंडिया' के माध्यम से इन्होंने नेपाल के इतिहास पर भी प्रकाश डाला है।

मुद्रा शास्त्र पर भी इन्होंने कई शोध कार्य किए। 'हिस्ट्री ऑफ इंडिया' में इन्होंने गंगा घाटी की बहुत सी मुद्राओं का विवेचन किया है। इन्होंने कुछ मुद्राओं का संबंध मौर्यों के साथ स्थापित कर नए विचार का प्रतिपादन किया जो आज भी आलोचनाओं के बावजूद मान्य है।

अभिलेखों के अध्ययन में जयसवाल साहब का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य खारवेल के अभिलेख संबंधी विवाद को सुलझाना है। इसके अतिरिक्त इन्होंने अशोक के अभिलेख एवं राज्यरोहण की तिथि, ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति तथा भुवनेश्वर मंदिर के अभिलेखों का सम्पादन, अयोध्या का शुंग अभिलेख, समुद्रगुप्त का प्रयाग प्रशस्ति अभिलेख, मुहरों का अध्ययन तथा अनेक अभिलेखों का तिथिक्रम के अनुसार उसकी व्याख्या प्रस्तुत कर इतिहास लेखन को सुगम बनाया।

डॉ० जयसवाल परम्परावादी इतिहासकार नहीं थे। इनके अन्दर पाश्चात इतिहासकारों की तरह वैज्ञानिक दृष्टि थी। इनके इतिहास लेखन में अधिवक्ता की पद्धति हावी थी। ये ऐतिहासिक घटनाओं के सभी पक्षों एवं कारणों की समीक्षा के पश्चात् ही किसी निष्कर्ष पर पहुँचते थे। इन्होंने स्मिथ के विचारों का खण्डन, साक्ष्यों के संतुलित उपयोग के आधार पर किया। ये इतिहास लेखन में स्रोतों के तुलनात्मक अध्ययन क पश्चात ही किसी अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचते थे।

काशी प्रसाद जयसवाल के इतिहास लेखन में हिन्दू विचार, दर्शन, धर्म, शासन, गणराज्य एवं सामाजिक व्यवस्था को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इनके इतिहास लेखन में मौलिकता और राष्ट्रीय स्वाभिमान की भी झलक मिलती है, जो भारतीयों को सदैव गौरवान्वित करता रहेगा। इन्होंने विपरित परिस्थिति (परतंत्र भारत) में जितना कार्य इतिहास लखेन के क्षेत्र में किया वह अत्यंत सराहनीय है।

डॉ० अनंत सदाशिव अल्तेकर

डॉ० अनंत सदाशिव अल्तेकर महान पुरातत्वविद् एवं इतिहासकार थे। पटना विश्वविद्यालय में प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग के खुलने पर इन्होंने संस्थापक अध्यक्ष के रूप में अपना योगदान दिया। ये काशी प्रसाद जयसवाल शोध संस्थान के संस्थापक निदेशक एवं राष्ट्रभाषा परिषद् के सदस्य भी थे।

डॉ० अल्तेकर ने पटना वि० वि० में योगदान के पूर्व बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में पुरातत्व, मुद्राशास्त्र एवं सांस्कृतिक उत्थान के लिए प्रशंसनीय कार्य किया। इन्होंने वैशाली के ऐतिहासिक महत्व को उजागर करने के लिए 'वैशाली का अंधकार युग' पर अपना शोध प्रस्तुत किया। इन्होंने वैशाली की खुदाई कर भगवान बुद्ध के शरीरवशेष स्तूप को दुनिया के सामने लाया। अल्तेकर द्वारा किए गए कार्यो का ऐतिहासिक महत्व बढ़ गया।

बिहार के राज्यपाल आर० आर० दिवाकर द्वारा संपादित पुस्तक 'बिहार थ्रू द एजेज' के प्रकाशन में डॉ० अल्तेकर का महत्वपूर्ण योगदान रहा। यह पुस्तक बिहार की गरिमा को रेखांकित करने में काफी सफल रहा। डॉ० अल्तेकर बिहार सरकार के अनुरोध पर बिहार का संपूर्ण इतिहास लिखने की योजना बना रहे थे कि इनका असामयिक निधन हो गया। इनकी योजना को बाद के इतिहासकारों ने पूरा किया।

डॉ0 अल्तेकर पटना विश्वविद्यालय से अवकाश ग्रहण करने के बाद के० पी० जयसवाल शोध संस्थान के पूर्णकालिक निदेशक बने और जीवन पर्यन्त रहे। डॉ० अल्तेकर न्यूमिस्मेटिक सोसाइटी सहित कई संस्थाओं के अध्यक्ष एवं सदस्य रहे एवं कई पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया। डॉ० योगेन्द्र मिश्र ने अपना शोधग्रंथ 'ऐन अर्ली हिस्ट्री

ऑफ वैशाली' उन्हीं को समर्पित किया। न्यूमिस्मेटिक सोसाइटी ने तो अपने भवन का नाम ही 'अल्तेकर भवन' रखा है।

डॉ० अल्तेकर छात्र जीवन से ही प्रतिभा सम्पन्न एवं अत्यंत मेधावी थे। इन्होंने बम्बई विश्वविद्यालय से संस्कृत में 'चांसलर मेडल' प्राप्त किया एवं एल०एल०बी० के लिए लारेन्स जेकिन्स स्कॉलरशिप भी प्राप्त किया। इनकी नियुक्ति बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के भारतीय संस्कृति विभाग में संस्कृत के अध्यापक के रूप में हुई। इन्होंने राष्ट्रकूटों के इतिहास पर डी०आर० बनर्जी के निर्देशन में डी० लिट् की उपाधि प्राप्त की। इनका शोध प्रबंध, पुराभिलेखों और साहित्यिक स्रोतों पर आधारित था। इसके कारण इनकी ख्याति एक इतिहासकार के रूप में फैली। अपने अथक प्रयास से इन्होंने 21 पुस्तक और लगभग 200 शोध पत्र प्रकाशित कराया। मुद्रा शास्त्र में इनकी रूचि एवं विशेषज्ञता ने पटना विश्वविद्यालय को गुप्तकालीन स्वर्णमुद्राओं से समृद्ध कर दिया। स्वतंत्रता के पूर्व इनकी कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् ने इन्हें इनकी पुस्तक 'प्राचीन भारतीय शासन पद्धति' के लिए एक हजार मुद्रा का पुरस्कार प्रदान किया। पुरस्कार ग्रहण करते वक्त इन्होंने कहा था, "मैंने राष्ट्रभाषा समझकर हिन्दी की सेवा की है, आर्थिक लाभ के लिए नहीं।" राष्ट्रभाषा हिन्दी के पति इनमें अगाध प्रेम था।

इन्हें 1954 में अमेरिका में अतिथि व्याख्याता के रूप में बुलाया गया। इसी वर्ष भारतीय संस्कृति पर व्याख्यान देने वेस्टइंडीज भी गए। डॉ० अल्तेकर इतिहास लेखन में किसी वाद से नहीं बंधे हुए थे। ये प्रत्येक क्षण व्यस्त रहने में विश्वास करते थे जिसके कारण इन्हें 'हड़बड़िया' भी कहा गया। इनका मानना था कि जब किसी पुस्तक की पांडुलिपि तैयार हो जाए तो इसे प्रकाशित कर देना चाहिए। इन्हें संवारने का कार्य नए शोध प्रज्ञों पर छोड़ देना चाहिए। अल्तेकर के शोध का आधार मूलतः साहित्यिक स्रोत था लेकिन ये पुराभिलेखों एवं मुद्राशास्त्र के भी ज्ञाता थे। पुरातत्व के क्षेत्र में इन्होंने बिहार में सर्वाधिक कार्य किया।

अल्तेकर रूढ़ीवादी नहीं थे। नारियों के प्रति इनका दृष्टिकोण उदार था। नारियों की दशा पर उनके द्वारा रचित पुस्तक से यह साफ पता चलता है। इनके गाँव में घटित सती की

घटना ने इन्हें काफी प्रेरित किया था। इन्होंने इलाहाबाद के 'लीडर' पत्र में एक लेख छपवाया जिसमें यह साबित किया गया था कि वेद पढ़ने का अधिकार स्त्रियों और शुद्रों को भी है। यह लेख उसी समय प्रकाशित हुआ जब एक शुद्र लड़की बी०एच०यू० के प्राच्य विभाग में अध्ययन करना चाहती थी। इस कारण इस लेख की चर्चा काशी में खूब हुई।

डॉ० अल्तेकर ने पं० राहुल सांकृत्यान द्वारा संगृहीत पाण्डुलिपियों के प्रकाशन के लिए काफी मेहनत किया। इस कार्य में इन्हें बलदेव मिश्र का अपेक्षित सहयोग मिला।

इनके संबंध में जगदीश चन्द्र माथुर ने अपने संस्मरण में लिखा है कि 'मैं अक्सर ताज्जुब करता था कि डॉ० अल्तेकर ने अपने सभी ग्रंथ भारत में ही क्यों छपवाए, जबकि उनकी इतिहास विषयक रचनाएँ विश्वस्तरीय थीं। क्योंकि इंग्लैंड या अमेरिका में प्रकाशित ग्रंथों की जो प्रतिष्ठा थी, वह भारत में प्रकाशित ग्रंथों की नहीं थी। क्या डॉ० अल्तेकर इस बात को नहीं समझ सके। एक बार पूछने पर उन्होंने कहा—बहुत पहले जब राष्ट्रपिता का दौर आया था तभी मैंने संकल्प लिया था कि इंग्लैंड में अपनी पुस्तकें नहीं छपवाऊँगा। आखिर इतने लोग महँगे विदेशी कपड़ों का बहिष्कार कर क्यों खादी को अपना रहे थे। मैं अपने ग्रंथों को तो देशी रूप दे सकता था। हालाँकि अब परिस्थिति बदल गई है लेकिन संकल्प को कैसे तोड़ूँ। डॉ० अल्तेकर राष्ट्र प्रेम से सदैव अभिभूत रहते थे। वे खादी का वस्त्र भी धारण करते थे। इनका जीवन बिल्कुल सादा था। लेकिन शोध कार्य में कभी पीछे नहीं रहते थे।